Vishv UMIYA Foundation | VUF INSTITUTE CIVIL SERVICES

DAILY CURRENT AFFAIRS

IN HINDI

SPECIAL FOR UPSC & GPSC EXAMINATION

DATE : 21-05-25

The Hindu Important News Articles & Editorial For UPSC CSE

Wednesday, 21 May, 2025

Edition : International Table of Contents

Page 01 **Syllabus : GS 2 : International Relations**	राजनयिक संपर्क यात्राएं आज से शुरू होंगी
Page 01 **Syllabus : GS 2 : Polity and Governance**	नया वक्फ कानून संपत्ति अधिग्रहण को बढ़ावा दे रहा है, याचिकाकर्ताओं ने सुप्रीम कोर्ट में दलील दी
Page 02 **Syllabus : GS 1 : Social Issues**	दिल्ली में प्रजनन दर में गिरावट से अच्छी खबरें कम बुरी खबरें नहीं
Page 06 **Syllabus : Prelims Fact**	बिग बैंग सिद्धांत को चुनौती देने वाले भारतीय खगोल वैज्ञानिक जयंत नार्लीकर का निधन
Page 10 **Syllabus : GS 2 : Indian Polity**	भारत के परमाणु कार्यक्रम के प्रमुख वास्तुकार एम.आर. श्रीनिवासन का निधन
Page 08 : Editorial Analysis: **Syllabus : GS 2 : Social Justice**	3 साल का नियम: न्यायपालिका के उम्मीदवारों के लिए झटका

Page 01 : GS 2 : International Relations

भारत ने एशिया, अफ्रीका, यूरोप और मध्य पूर्व के 25 से अधिक देशों में बहुदलीय संसदीय प्रतिनिधिमंडलों को शामिल करते हुए एक महत्वपूर्ण कूटनीतिक संपर्क अभियान शुरू किया है। इस कदम का उद्देश्य पाकिस्तान से सीमा पार आतंकवाद के मुद्दे पर एक संयुक्त राष्ट्रीय मोर्चा पेश करना है, खासकर ऑपरेशन सिंदूर के बाद, जो पहलगाम आतंकी हमले के जवाब में चलाया गया था।

Diplomatic outreach visits begin today

- Three multi-party delegations will start their journey today and tomorrow, says Ministry
- They will highlight cross-border terror from Pakistan while presenting India's doctrine of zero tolerance
- The teams will visit countries such as Japan, South Korea, Singapore, Malaysia, DRC, and the UAE

Kallol Bhattacherjee
NEW DELHI

The first three multi-party delegations to international capitals to brief global community about Operation Sindoor will start their journey on Wednesday and Thursday, the Ministry of External Affairs said on Tuesday.

The delegations, over the next fortnight, will highlight that cross-border terrorism from Pakistan continues to be a major disruptor for India while presenting the Indian doctrine of zero tolerance of terror, according to veteran diplomat Syed Akbaruddin, who is part of the diplomatic outreach effort.

"In various countries of the world, the salience of terrorism over the past two decades has gone down as they are prioritising other issues. For example, for some countries, T stands for tariff but for us in India, T also stands for terrorism because over several decades now, cross-border terrorism from Pakistan has been a challenge to our social harmony and developmental goals," said Mr. Akbaruddin, who will visit Egypt, Qatar, Ethiopia, and South Africa between May 24 and June 1, along with eight MPs in a delegation led by Suprya Sule of the NCP (SCP).

The first three teams that will leave during Wednesday and Thursday were briefed by Foreign Secretary Vikram Misri on Tuesday. These three teams will also visit Japan, Republic of Korea, Singapore, Indonesia, Malaysia, the United Arab Emirates, Democratic Republic of Congo, Sierra Leone, Liberia, Russia, Slovenia, Greece, Latvia, and Spain. The other four teams will start their journey during May 23 to 25.

BJP MP Aparajita Sarangi said that apart from the members of the UN Security Council, five other countries have been selected that will become members of the UNSC in the coming days. "So, representatives are going to over 25 nations...This is our message that India stands united against terrorism," said Ms. Sarangi.

'Proxy war'

"We will be interacting with a cross-section of people there like the principal state actors, ministers, members of Parliament, academicians. These would be general meetings set on the general background of Indo-Pak issues and the terror being exported to India from Pakistan," said CPI(M) MP John Brittas, who will be part of the delegation being led by Sanjay Kumar Jha of the Janata Dal (United). This delegation will start its tour in Japan on May 22 and then proceed to visit the Republic of Korea, Singapore, Indonesia, ending with Malaysia.

Speaking to the media, Mr. Jha said the focus of their campaign would be on the involvement of the Pakistan state and military in the terror attacks against India. "Pakistan State and Pakistan Army are both involved in this. This was done like a proxy war against India," said Mr. Jha.

The government had constituted seven groups consisting of 51 MPs from various political parties to project a united national front before the world community while briefing them about Operation Sindoor that targeted nine terror hubs in Pakistan in response to Pahalgam attack.

A united front

The multi-party delegations are expected to meet government functionaries, including Ministers, think-tanks and media during their visits to foreign capitals

■ The group led by Janata Dal (United) leader Sanjay Jha will visit Indonesia, Republic of Korea, Japan, Malaysia, and Singapore

■ The team headed by Shrikant Shinde of Shiv Sena will visit UAE, Liberia, Democratic Republic of Congo, and Sierra Leone

■ The delegation led by DMK leader Kanimozhi is set to visit Russia, Spain, Greece, Slovenia, and Latvia

Trinamool, Sena (UBT) relent

The Hindu Bureau
DELHI/KOLKATA

The Trinamool Congress and the Shiv Sena (UBT) have changed their stance on nomination of their MPs to the diplomatic teams after Union Minister Kiren Rijiju reached out to the party leaders on Tuesday. The Trinamool has named Abhishek Banerjee in place of Yusuf Pathan, while the Sena has endorsed Priyanka Chaturvedi.

FULL REPORT ON » PAGE 5

आउटरीच के उद्देश्य:

- भारत के खिलाफ आतंकवाद को प्रायोजित करने में पाकिस्तान की निरंतर भूमिका पर वैश्विक संवेदनशीलता।
- आतंकवाद के प्रति भारत के शून्य सहिष्णुता के सिद्धांत को सुदृढ़ करना।
- विविध राजनीतिक पृष्ठभूमि से सांसदों को शामिल करके राष्ट्रीय एकता को प्रदर्शित करना।
- अंतर्राष्ट्रीय कूटनीतिक मंचों पर भारत की स्थिति को मजबूत करना, विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के प्रमुख सदस्यों और आने वाले सदस्यों के समक्ष।

पहल की मुख्य विशेषताएं:

- **51** सांसदों वाले सात प्रतिनिधिमंडल टोक्यो, सियोल, जकार्ता, कुआलालंपुर, अबू धाबी और मॉस्को सहित विभिन्न राजधानियों का दौरा कर रहे हैं।
- प्रतिनिधिमंडल वैश्विक राय को आकार देने के लिए राज्य के अभिनेताओं, सांसदों, शिक्षाविदों और नीति प्रभावितों के साथ बातचीत कर रहे हैं।

- आतंकवाद पर जोर दिया जाता है जो भारत के सामाजिक सद्भाव और विकास लक्ष्यों के लिए दीर्घकालिक खतरा है, जबकि कई देशों में यह अब कम प्राथमिकता वाला है।

भू-राजनीतिक महत्व:

- यह अभियान पाकिस्तान को उसके आतंकी ढांचे के कारण कूटनीतिक रूप से अलग-थलग करने के भारत के लंबे समय से चले आ रहे प्रयासों के अनुरूप है।
- रणनीतिक देशों - क्षेत्रीय शक्तियों और यूएनएससी हितधारकों - को चुनकर भारत का लक्ष्य आतंकवाद के खिलाफ बहुपक्षीय समर्थन हासिल करना है।
- यह कूटनीतिक अभियान पाकिस्तान के अंतर्राष्ट्रीय आख्यान का मुकाबला करने का एक तरीका भी है, खासकर ओआईसी, यूएनएचआरसी और वैश्विक मीडिया जैसे मंचों पर।

घरेलू राजनीति में एकता:

- भाजपा, सीपीआई(एम), जेडी(यू) और एनसीपी सहित राजनीतिक स्पेक्ट्रम के सांसदों की भागीदारी राष्ट्रीय सुरक्षा के मुद्दों पर मजबूत आंतरिक सहमति को दर्शाती है।
- यह भारतीय राजनीति में द्विदलीय एकता के एक दुर्लभ क्षण को दर्शाता है, जो भारत के बाहरी संदेश को विश्वसनीयता प्रदान करता है।

आलोचना और रणनीतिक विचार:

- जबकि इस तरह के कूटनीतिक प्रयास भारत की सॉफ्ट पावर और आख्यान-निर्माण को बढ़ाते हैं, उनकी दीर्घकालिक सफलता निरंतर जुड़ाव और अनुवर्ती कार्रवाई पर निर्भर करती है।
- वास्तविक चुनौती कूटनीतिक सहानुभूति को ठोस कार्रवाई में बदलना है, जैसे आतंकवाद के वित्तपोषण के खिलाफ़ तंत्र, संस्थाओं को काली सूची में डालना और पाकिस्तान को हथियारों के हस्तांतरण पर प्रतिबंध।
- भारत को यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि यह पहुँच कश्मीर मुद्दे का अंतर्राष्ट्रीयकरण न करे, जिसका उसने ऐतिहासिक रूप से विरोध किया है।

निष्कर्ष:

- ऑपरेशन सिंदूर के बाद भारत की नवीनतम कूटनीतिक पहल एक सक्रिय विदेश नीति बदलाव का संकेत देती है, जिसमें कठोर सुरक्षा प्रतिक्रियाओं को नरम कूटनीतिक अभियानों के साथ जोड़ा गया है। वैश्विक मंचों का लाभ उठाकर और प्रभावशाली देशों तक पहुँच बनाकर, भारत आतंकवाद पर वैश्विक विमर्श को नया आकार देना चाहता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि पाकिस्तान से सीमा पार आतंकवाद वैश्विक सुरक्षा एजेंडे में एक केंद्रीय चिंता का विषय बना रहे। विपक्षी सांसदों को शामिल करने से लोकतांत्रिक वैधता बढ़ती है और बाहरी खतरों के सामने भारत की राष्ट्रीय एकता प्रदर्शित होती है।

UPSC Mians Practice Question

प्रश्न: भारत ने सीमा पार आतंकवाद का मुकाबला करने के लिए तेजी से सक्रिय कूटनीतिक दृष्टिकोण अपनाया है। ऑपरेशन सिंदूर और हाल के बहुपक्षीय प्रतिनिधिमंडलों के संदर्भ में, विश्लेषण करें कि सॉफ्ट पावर और संसदीय कूटनीति राष्ट्रीय सुरक्षा उद्देश्यों को कैसे मजबूत कर सकती है।

Page 01 : GS 2 : Polity and Governance

वक्फ (संशोधन) अधिनियम, 2025 कई याचिकाओं के बाद न्यायिक जांच के दायरे में आ गया है, जिसमें आरोप लगाया गया है कि यह कानून राज्य को बिना किसी मुआवजे के मुस्लिम समुदाय की संपत्तियों को अप्रत्यक्ष रूप से जब्त करने में सक्षम बनाता है, जिससे अनुच्छेद 25 और 26 के तहत संवैधानिक गारंटी का उल्लंघन होता है। कपिल सिब्बल और ए.एम. सिंघवी सहित वरिष्ठ अधिवक्ताओं के नेतृत्व में याचिकाकर्ताओं ने इसे "धीरे-धीरे अधिग्रहण" का मामला बताया है जो धार्मिक स्वतंत्रता और अल्पसंख्यक अधिकारों को कमजोर करता है।

उठाए गए प्रमुख कानूनी और संवैधानिक मुद्दे

1. संवैधानिकता की धारणा बनाम प्रथम दृष्टया उल्लंघन

- सर्वोच्च न्यायालय ने देखा कि किसी भी संसदीय क़ानून में संवैधानिकता की धारणा होती है।
- हालांकि, याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि इस धारणा को खारिज किया जा सकता है यदि मौलिक अधिकारों का प्रथम दृष्टया उल्लंघन होता है, खासकर जब तत्काल कार्यान्वयन से अपूरणीय क्षति हो सकती है।

2. अनुच्छेद 25 और 26 का कथित उल्लंघन

- याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि संशोधन वक्फ संपत्तियों के धार्मिक और धर्मार्थ उपयोग में हस्तक्षेप करते हैं, जो अनुच्छेद 25 (धर्म की स्वतंत्रता) और 26 (धार्मिक मामलों के प्रबंधन का अधिकार) के तहत संरक्षित हैं।
- कथित तौर पर कानून राज्य को पर्याप्त प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपायों के बिना वक्फ संपत्तियों को गैर-वक्फ के रूप में एकतरफा पुनर्वर्गीकृत करने की अनुमति देता है।

New Waqf law 'creeping acquisition' of property, petitioners argue in SC

Krishnadas Rajagopal
NEW DELHI

> You have to make a strong case for interim relief. The presumption in favour of a parliamentary law is that of constitutionality
>
> **B.R. GAVAI** Chief Justice of India

> The 2025 amendments... directly encroach on a minority community's rights under Article 25 [freedom of religion]
>
> **KAPIL SIBAL** Advocate for petitioners

Countering the Supreme Court's observation that a parliamentary statute like the Waqf (Amendment) Act, 2025 enjoys a presumption of constitutionality, petitioners on Tuesday termed the new law a "creeping acquisition" of Waqf properties owned by the Muslim community, the largest religious minority group in India.

A Bench of Chief Justice of India B.R. Gavai and Justice Augustine George Masih heard petitioners for a full day on their plea for an interim order to stay the implementation of the 2025 Act, which came into force on April 8. "Today, you [petitioners] are only arguing for interim relief. You have to make a strong case for interim relief. The presumption in favour of a parliamentary law is that of constitutionality," Chief Justice Gavai said, addressing senior advocate Kapil Sibal, the lead counsel for the petitioners.

Mr. Sibal said a presumption of constitutionality could be rebutted if a *prima facie* breach was shown. The court could intervene and stay the law in public interest if its execution caused irreparable injury, he said.

'Ruse for acquisition'

"The 2025 amendments are a ruse to capture Waqfs. Property can be acquired by the government through a legislative diktat, that too without payment of compensation, which is usual in cases of acquisition. These amendments directly encroach on a minority community's rights under Article 25 [freedom of religion]," Mr. Sibal submitted.

The senior lawyer noted how Section 3C of the 2025 Act gave free rein to any encroacher to start a dispute.

The inquiry into the dispute would be conducted by a designated officer, who is a government servant or an "agent of the government".

There is no timeline or procedure prescribed for the inquiry in the Act. A dispute over even a fragment of the land would freeze the Waqf status of the entire property, Mr. Sibal noted.

"This means existing uses of the property, whether it be for schools, hospitals, burial, community centres etc., would have to immediately cease. There is also no restriction on demolition or on the government creating irreversible third-party rights in such properties during the inquiry period. The government can unilaterally deem a property as non-Waqf," Mr. Sibal submitted.

He referred to the "subordination" of Muslim members in Waqf administrative bodies by including non-Muslims in them. He pointed out that no other religious endowments, Hindu or Sikh, allowed room for people of other faiths to run their temples or gurdwaras.

Mr. Sibal pointed out that a Waqf property, once declared a protected monument or area under the Ancient Monuments Preservation Act, 1904 or the Ancient Monuments and Archaeological Sites and Remains Act, 1958, would become void as a Waqf under Section 3D of the 2025 Act.

Senior advocate A.M. Singhvi argued that this "super-imposing" of ancient monument laws on religious Waqfs would have a ripple effect on the protection given to them under the Places of Worship Act, 1991.

Unregistered Waqfs

He submitted that half of the country's eight lakh Waqfs are unregistered Waqfs-by-user, which have been effectively invalidated by the 2025 Act as they have been barred from approaching court. Many of these age-old Waqfs have no documents or deeds to support their identity, though they have been used for charitable and religious purposes for centuries, he said.

Mr. Singhvi alleged that the government's claim of a 116% "explosion" in Waqf properties from 2013 to 2024 was intended to prejudice the court.

The Centre is expected to begin its counter-arguments today.

KERALA MOVES SC
» PAGE 4

3. सरकारी नियंत्रण और प्रशासनिक हस्तक्षेप

- धारा 3सी सरकार द्वारा नामित अधिकारियों को संपत्तियों की वक्फ स्थिति की जांच शुरू करने और संचालित करने की अनुमति देती है।
- स्पष्ट प्रक्रियात्मक समयसीमा की अनुपस्थिति और जांच के दौरान वक्फ की स्थिति को स्थिर करना, चाहे विवाद कितना भी छोटा क्यों न हो, शिक्षा, स्वास्थ्य और कब्रिस्तान जैसी आवश्यक सेवाओं को बाधित कर सकता है।
- वक्फ बोर्डों में गैर-मुस्लिमों को शामिल करना मंदिरों और गुरुद्वारों जैसे अन्य धार्मिक संस्थानों को दी गई स्वायत्तता के साथ असंगत माना जाता है।

अपंजीकृत वक्फ और विरासत कानूनों पर प्रभाव

- 50% से अधिक वक्फ संपत्तियां अपंजीकृत हैं, लेकिन पारंपरिक रूप से धार्मिक और धर्मार्थ उद्देश्यों के लिए काम करती रही हैं। अब इन पर न्यायालयों में जाने पर रोक लगा दी गई है, जिससे वंचित होने का डर है।
- संशोधित अधिनियम की धारा 3डी में प्रावधान है कि एक बार वक्फ को संरक्षित स्मारक घोषित कर दिया जाता है, तो वह वक्फ नहीं रह जाता है, जो संभावित रूप से पूजा स्थल अधिनियम, 1991 के साथ विरोधाभासी है और ऐतिहासिक धार्मिक उपयोग की पवित्रता को खतरे में डालता है।

बड़ी चिंताएँ और निहितार्थ

1. अल्पसंख्यक अधिकार और धर्मनिरपेक्षता

- आलोचकों का तर्क है कि यह कानून धर्मनिरपेक्षता के संवैधानिक वादे को कमजोर करता है, क्योंकि यह कथित तौर पर मुस्लिम समुदाय के साथ भेदभाव करता है, क्योंकि यह अन्य धर्मों के लोगों की तुलना में उनके बंदोबस्त को अलग तरह से देखता है।
- धार्मिक संपत्ति प्रबंधन में गैर-मुस्लिमों को शामिल करना सामुदायिक स्वायत्तता पर उल्लंघन के रूप में माना जाता है।

2. राज्य की शक्ति और विधायी अतिक्रमण

- अधिग्रहण मानदंडों (जैसे कि मुआवज़े का भुगतान) को दरकिनार करने के लिए विधायी साधनों का उपयोग अप्रत्यक्ष अधिग्रहण के रूप में देखा जाता है, जो संपत्ति के अधिकारों के लिए एक खतरनाक मिसाल कायम करता है।
- इस कदम की व्याख्या कुछ लोगों द्वारा धार्मिक बंदोबस्त पर नियंत्रण को केंद्रीकृत करने, सामुदायिक एजेंसी को कम करने की व्यापक प्रवृत्ति के हिस्से के रूप में की जाती है।

निष्कर्ष

- वक्फ (संशोधन) अधिनियम, 2025 ने गंभीर संवैधानिक, धार्मिक और संपत्ति अधिकारों की चिंताओं को उठाया है। इसके मूल में, कानूनी चुनौती राज्य प्राधिकरण और अल्पसंख्यक अधिकारों के बीच संतुलन के बारे में है, और क्या राज्य को दी गई प्रक्रियात्मक लचीलापन न्याय, समानता और धार्मिक स्वतंत्रता के बुनियादी सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। इस मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले से अल्पसंख्यक संरक्षण, धार्मिक स्वायत्तता और धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र में विधायी शक्ति की सीमाओं के लिए दूरगामी प्रभाव पड़ने की संभावना है।

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: वक्फ (संशोधन) अधिनियम, 2025 ने राज्य प्राधिकरण और अल्पसंख्यक अधिकारों के बीच संतुलन पर बहस छेड़ दी है। अनुच्छेद 25 और 26 के प्रकाश में अधिनियम के खिलाफ उठाई गई संवैधानिक चिंताओं की आलोचनात्मक जांच करें।

Page : 02 : GS 1 : Social Issues

भारत के महापंजीयक द्वारा जारी सैंपल रजिस्ट्रेशन सिस्टम (एसआरएस) रिपोर्ट 2021 से पता चलता है कि दिल्ली ने देश में सबसे कम कुल प्रजनन दर (टीएफआर) 1.4 दर्ज की है, जो 2011 में 1.9 से काफी कम है - यानी 26.3% की गिरावट। यह 2.1 के प्रतिस्थापन स्तर प्रजनन दर से काफी नीचे है और बिहार जैसे राज्यों से बहुत दूर है, जहां सबसे अधिक टीएफआर 3.0 है।

More good news than bad in Delhi's fertility rate dip

Ashna Butani
NEW DELHI

Delhi has not only recorded the lowest Total Fertility Rate (TFR), the average number of children per woman, but also the highest decline in the TFR in recent years.The Sample Registration System (SRS) report by the Registrar General of India for 2021, released on May 7, stated that Delhi's TFR was 1.4 in 2021 against 1.9 in 2011, a 26.3% decline.

At 3.0, Bihar registered the highest TRF against the national average of 2.0.

Academics and reproductive health specialists have cited inflation, more women in the workforce, independent decision-making, better maternal and infant health, and infertility as possible reasons for Delhi's lowest TFR.

"Earlier, the maternal or paternal family took the family planning decision. But as women are now more empowered and independent, they are able to take decisions independently," pointed out Praveen K. Pathak, Professor at JNU's Centre for the Study of Regional Development, who specialises in population health and demographic changes.

Dr. Rashmi Gera, head of the family planning unit at Guru Teg Bahadur Hospital, also noted similar trends. "Cultural and social change, such as women getting better education and participating more in the workforce, is leading to changes in family planning," she said.

Social change

Dr. Gera said another reason couples are preferring fewer children is that most of them have migrated to Delhi and find it difficult to raise a child without grandparents or relatives.

According to the SRS report, over the years, the city has seen a shift in the fertility cycle with an increase in fertility in the middle age group (30-44) and a decrease in lower age groups (15-29).

In 2011, Delhi's Age Specific Fertility Rate, the number of women per 1,000 giving birth, in the age group of 20-24 was 139.7, which reduced to 65.4 in 2021.

Niharka Tripathi, an Assistant Professor of Sociology at a Delhi University college whose research focuses on gender and population, cited women's priority to careers in their twenties and family planning after becoming financially independent as possible reasons for the shift in the fertility cycle.

"Additionally, inflation, nannies or childcare professionals' fees, and education expenses keep couples away from having more children," said Ms. Tripathi.

Anju Sharma, an Accredited Social Health Activist in east Delhi, said she had observed that couples prefer one child due to limited earnings."Several women in my locality say that they have one child as they want to give the best care, rather than having two or three children and struggling with expenses," said Ms. Sharma.

However, Dr. Shama Batra, a gynaecologist at Patel Hospital in Laxmi Nagar, cited infertility due to a sedentary lifestyle as a reason for the low TRF. "Polycystic ovary syndrome (PCOS), infertility due to sedentary lifestyle, long working hours and a higher intake of junk food are now common in cities," said Dr. Batra.

Another gynaecologist, Dr. Surbhi Singh, who works in a private clinic, noted that stress and pollution, common in cities like Delhi, are also a cause for PCOS. "In recent years, I have noticed many young couples aspiring towards the trend of having no kids primarily due to inflation or infertility," Dr. Surbhi added.

Changes in fertility patterns

In 2011, Delhi's Age Specific Fertility Rate (ASFR), the number of women per 1,000 giving birth, in the age group of 20-24 was 139.7, which reduced to 65.4 in 2021

IN 2011		IN 2021	
Age group	ASFR	Age group	ASFR
15-19	9.2	15-19	2.7
20-24	139.7	20-24	65.4
25-29	130.3	25-29	95.2
30-34	60.8	30-34	72.8
35-39	15.7	35-39	25.1
40-44	4.2	40-44	14.0
45-49	0.3	45-49	4.0

Source: Sample Registration System report

Getty Images/iStockphoto

रिपोर्ट की मुख्य बातें:

- दिल्ली की टीएफआर (2021): 1.4
- राष्ट्रीय औसत टीएफआर: 2.0
- दिल्ली की टीएफआर (2011-2021) में गिरावट: 26.3%
- आयु-विशिष्ट प्रजनन क्षमता में बदलाव: 15-29 आयु वर्ग में जन्म दर में कमी; 30-44 आयु वर्ग में वृद्धि

दिल्ली में प्रजनन क्षमता में गिरावट के पीछे कारण:

1. आर्थिक कारक:

- o मुद्रास्फीति और बच्चों के पालन-पोषण की उच्च लागत (शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, आवास)
- o चाइल्डकैअर पेशेवरों (नैनी, क्रेच) की लागत बड़े परिवारों को हतोत्साहित करती है

2. सामाजिक-सांस्कृतिक बदलाव:

- o बढ़ती महिला साक्षरता, आर्थिक स्वतंत्रता और कार्यबल में भागीदारी
- o एकल परिवारों और व्यक्तिगत निर्णय लेने की ओर सांस्कृतिक बदलाव
- o दिल्ली में प्रवास के कारण चाइल्डकैअर के लिए विस्तारित परिवार का समर्थन कम हो जाता है

3. बदलती आकांक्षाएँ और जीवनशैली:

- o 20 के दशक के दौरान करियर निर्माण पर ध्यान केंद्रित करना
- o देर से विवाह और देरी से बच्चे पैदा करना
- o मात्रा की तुलना में एक बच्चे की गुणवत्ता की परवरिश को प्राथमिकता देना

4. स्वास्थ्य और चिकित्सा कारक:

- o बढ़ती बांझपन की वजह:

- गतिहीन शहरी जीवनशैली
- पीसीओएस और जीवनशैली संबंधी विकारों में वृद्धि
- तनाव, प्रदूषण और खराब आहार संबंधी आदतें

- o मातृ और शिशु स्वास्थ्य के बारे में जागरूकता जिसके कारण कम, अच्छी तरह से अंतराल गर्भधारण

कम TFR के निहितार्थ:

सकारात्मक निहितार्थ:

- महिलाओं के सशक्तीकरण, शिक्षा और प्रजनन स्वायत्तता में प्रगति को दर्शाता है
- परिवार नियोजन और सार्वजनिक स्वास्थ्य जागरूकता के सफल प्रसार को दर्शाता है
- अल्पावधि में शहरी बुनियादी ढांचे पर जनसंख्या दबाव कम हो सकता है

चिंताएँ:

- प्रतिस्थापन से कम प्रजनन क्षमता भविष्य में जनसांख्यिकीय असंतुलन की आशंका को बढ़ाती है
- दीर्घावधि में बढ़ती जनसंख्या और सिकुड़ते कार्यबल
- निर्भरता अनुपात में संभावित वृद्धि
- पेंशन प्रणाली, स्वास्थ्य सेवा और सामाजिक सुरक्षा बुनियादी ढांचे पर अधिक बोझ

आगे की राह:

- संतुलित जनसंख्या नीतियों को बढ़ावा देना - न तो जबरदस्ती और न ही केवल कम जन्मों को प्रोत्साहित करना
- कामकाजी माता-पिता का समर्थन करने के लिए कार्य-जीवन संतुलन, लचीले कार्यस्थल और किफायती चाइल्डकैअर को प्रोत्साहित करना
- प्रजनन उपचार और प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच में सुधार
- बांझपन में योगदान देने वाली जीवनशैली से संबंधित स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान
- बच्चों के अनुकूल बुनियादी ढाँचे को समायोजित करने के लिए शहरी नियोजन को फिर से तैयार करना

निष्कर्ष:

- दिल्ली की घटती प्रजनन दर सामाजिक प्रगति और उभरती नीतिगत चुनौती दोनों का प्रतिबिंब है। यह महिला सशक्तिकरण, स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच और परिवार नियोजन में उपलब्धियों को दर्शाता है, लेकिन यह तेजी से हो रहे जनसांख्यिकीय परिवर्तन के बारे में चिंता भी दर्शाता है। नीति निर्माताओं को इन बदलावों का अनुमान लगाना चाहिए और लंबे समय में आर्थिक विकास और सामाजिक कल्याण दोनों को बनाए रखने के लिए समग्र प्रतिक्रियाएं तैयार करनी चाहिए।

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: दिल्ली में घटती प्रजनन दर सामाजिक प्रगति का संकेत है, साथ ही यह जनसांख्यिकीय चिंता का विषय भी है। भारत के शहरी सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के संदर्भ में आलोचनात्मक रूप से जाँच करें। (250 words)

Page 06 : Prelims Fact

दो वैज्ञानिक दिग्गजों की विरासत – जयंत नार्लीकर और एम.आर. श्रीनिवासन

Jayant Narlikar, Indian astrophysicist who challenged Big Bang theory, passes away

He first gained international recognition when, alongside the British astronomer Fred Hoyle, he proposed the 'steady state' model of the universe; a prolific writer, Narlikar explored themes ranging from alien encounters to the moral quandaries arising from the rapid technological progress

Jacob Koshy
NEW DELHI

Jayant Narlikar, one of India's most distinguished astrophysicists who combined profound theoretical insight into cosmology with a lifelong commitment to science communication, passed away at his residence in Pune on Tuesday. He was 86.

Describing what made Dr. Narlikar one of the "greats", Tarun Souradeep, Director of the Raman Research Institute (RRI), Bengaluru, told *The Hindu* that it was his "sense of justice and equality" and his "unwavering commitment" to popularising science and combating "non-science-based superstition and astrology" that set him apart.

As a gifted institution-builder, Dr. Narlikar played a pioneering role in establishing the Inter-University Centre for Astronomy and Astrophysics (IUCAA), Pune, where he served as Founder-Director. Under his stewardship, IUCAA emerged as a globally recognised centre for theoretical physics, cosmology, and astrophysics.

"He spawned a number of leading scientists who set new directions and schools: Thanu Padmanabhan (cosmology, gravitation, and quantum gravity); Sanjeev Dhurandhar (gravitational waves); Ajit Kembhavi (data-driven observational astronomy), to name a few," Dr. Souradeep, who completed his doctoral research under Dr. Narlikar's guidance, said.

'Science populariser'

A prolific writer and science populariser, Dr. Narlikar once recalled, in a blog post, "playing table tennis with Stephen Hawking (prior to his muscular atrophy)" when they were both students at the University of Cambridge.

Dr. Narlikar first gained international recognition when, alongside the British astronomer Fred Hoyle, he proposed the "steady state" model of the universe – a theory positing a timeless cosmos in which matter is continuously created.

JAYANT NARLIKAR (1938-2025)

This stood in contrast to the dominant Big Bang model, a term ironically coined by Sir Fred to disparage it, which posits that the universe began at a single point in time.

Vocal critic

Although subsequent observational evidence has since firmly supported the Big Bang theory, Dr. Narlikar remained a persistent and vocal critic of it, adapting and refining the steady state view throughout his career.

"He wore his remarkable learning in various disciplines very lightly and he combined to an unusual degree formidable scholarship with humility. He was well and truly a most luminous star of Indian science, who reflected the noblest of our civilisational traditions," Congress communications in-charge and Rajya Sabha member Jairam Ramesh tweeted. He shared an excerpt from the 1964 edition of *Yojana* – a Planning Commission publication – which debated whether India should lure the young Narlikar back from Cambridge.

In a rare feat, Dr. Narlikar was awarded the Padma Bhushan in 1965, even before formally beginning his career in India at the Tata Institute of Fundamental Research (TIFR), Mumbai. He later received the Padma Vibhushan in 2004.

Among his many accolades were the UNESCO Kalinga Prize for the popularisation of science in 1996 and the prestigious Prix Jules Janssen from the French Astronomical Society in 2004.

Literary contributions

Dr. Narlikar was also widely admired for his literary contributions. His science-fiction story *Dhoomaketu* (*The Comet*) was adapted into a film, while his autobiography *Chaar Nagarantale Maze Vishwa* (*My Tale of Four Cities*) was awarded the Sahitya Akademi Prize. His writing – marked by clarity, an avoidance of jargon, and philosophical depth – explored themes ranging from alien encounters to the moral quandaries arising from the rapid technological progress.

His key influences

He was frequently featured in science programmes on television in the 1990s and credited Carl Sagan's outreach work, as well as the fiction of Sir Fred, Isaac Asimov, Arthur C. Clarke, and Ray Bradbury, as key influences in his approach to communicating science.

Born to eminent parents – Vishnu Vasudev Narlikar, a mathematician at Banaras Hindu University (now IIT-BHU), and Sumati Narlikar, a Sanskrit scholar – Dr. Narlikar received his early education in Varanasi before moving to the University of Cambridge, where he completed his Ph.D. under Sir Fred's mentorship.

1. जयंत विष्णु नार्लीकर (1938-2025)

मुख्य तथ्य:

- प्रसिद्ध भारतीय खगोलशास्त्री, बिग बैंग थ्योरी को चुनौती देने के लिए जाने जाते हैं।
- ब्रिटिश खगोलशास्त्री फ्रेड हॉयल के साथ 'स्थिर अवस्था सिद्धांत' का सह-विकास किया।
- पुणे में इंटर-यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर एस्ट्रोनॉमी एंड एस्ट्रोफिजिक्स (IUCAA) के संस्थापक-निदेशक।
- सैद्धांतिक ब्रह्मांड विज्ञान और विज्ञान संचार में अपने काम के लिए जाने जाते हैं।

पुरस्कार:

o पद्म भूषण (1965) - भारत में औपचारिक काम से पहले असामान्य रूप से जल्दी सम्मानित किया गया।

o पद्म विभूषण (2004)।

o विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए यूनेस्को कलिंग पुरस्कार (1996)।

o प्रिक्स जूल्स जैनसेन (2004) - फ्रेंच एस्ट्रोनॉमिकल सोसाइटी का सर्वोच्च पुरस्कार।

- **लोकप्रिय रचनाएँ:**

o धूमकेतु (धूमकेतु) - विज्ञान कथा पर आधारित फिल्म।

o आत्मकथा - चार नगरान्तले मज़े विश्व (साहित्य अकादमी पुरस्कार)।

- छद्म विज्ञान का विरोध करने और तर्कवाद को बढ़ावा देने के लिए जाने जाते हैं।

M.R. Srinivasan, a key architect of India's nuclear programme, no more

The Hindu Bureau
UDHAGAMANDALAM

M.R. Srinivasan, former Chairman of the Atomic Energy Commission and Secretary of the Department of Atomic Energy, passed away in Udhagamandalam on Tuesday. He was 95.

Dr. Srinivasan joined the Department of Atomic Energy (DAE) in September 1955 and began his distinguished career working alongside Dr. Homi J. Bhabha on the construction of India's first nuclear research reactor, Apsara, which achieved criticality in August 1956.

In August 1959, he was appointed Principal Project Engineer for the construction of India's first atomic power station. His leadership continued to shape the nation's nuclear programme when, in 1967, he took charge as Chief Project Engineer of the Madras Atomic Power Station.

Dr. Srinivasan held several key positions of national importance. In 1974, he became Director of the Power Projects Engineering Division, DAE, and in 1984, Chairman of the Nuclear Power Board. In these roles, he oversaw the planning, execution, and operation of all nuclear power projects across the country.

In 1987, he was appointed Chairman of the Atomic Energy Commission and Secretary of the Department of Atomic Energy. That same year, he became the Founder-Chairman of the Nuclear Power Corporation of India Ltd. (NPCIL). Under his leadership, 18 nuclear power units were developed – seven of which were operational, seven under construction, and four in the planning stage.

His contributions to India's nuclear energy landscape will be remembered for generations to come, his daughter Sharada Srinivasan said in a statement released by the family. In recognition of his contributions to India's nuclear energy programme, Dr. Srinivasan was awarded the Padma Vibhushan in 2015. "India will always be grateful to him for advancing scientific progress and mentoring many young scientists," Prime Minister Narendra Modi wrote on social media platform X.

"It has been my good fortune to have known him for a long time and he is someone who has left a deep and lasting impression on me by the strength of his commitments, his deep appreciation of the larger social functions of science, and his profound understanding of India's rich cultural traditions," Congress MP Jairam Ramesh wrote on X.

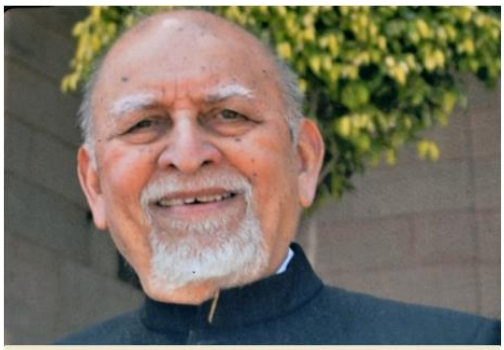

M.R. SRINIVASAN (1930-2025)

He began his career working alongside Homi Bhabha on the construction of India's first nuclear research reactor

2. एम.आर. श्रीनिवासन (1930-2025)

मुख्य तथ्य:

- परमाणु ऊर्जा आयोग (एईसी) के पूर्व अध्यक्ष और परमाणु ऊर्जा विभाग के सचिव।
- भारत के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम में एक आधारभूत भूमिका निभाई:

  o होमी जे. भाभा के साथ अप्सरा - भारत के पहले परमाणु रिएक्टर (1956) पर काम किया।

  o मद्रास परमाणु ऊर्जा स्टेशन के लिए मुख्य अभियंता।

  o पूरे भारत में 18 परमाणु ऊर्जा इकाइयों के विकास की देखरेख की।

- न्यूक्लियर पावर कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (एनपीसीआईएल) के संस्थापक-अध्यक्ष।
- पुरस्कार:

o पद्म विभूषण (2015)।

- भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्यों के प्रति गहरी प्रतिबद्धता के साथ तकनीकी उत्कृष्टता के सम्मिश्रण के लिए विख्यात।

Page 10 : GS 2 : Indian Polity

20 मई, 2025 को भारत के सर्वोच्च न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने अधीनस्थ न्यायिक सेवा परीक्षाओं में बैठने के इच्छुक उम्मीदवारों के लिए तीन साल की कानूनी प्रैक्टिस अनिवार्य करने के नियम को बहाल कर दिया। न्यायालय के इस निर्णय ने न्यायिक नियुक्तियों में योग्यता, पहुँच, प्रतिभा अधिग्रहण और प्रणालीगत सुधार पर बहस को फिर से हवा दे दी है।

3-year rule: a setback to judiciary aspiran

The Supreme Court's hope is that three years' of practice may help future judges in addressing courtroom decorum, complex procedural cases and in understanding the perspectives of all stakeholders of the judicial system

LETTER & SPIRIT

Faizan Mustafa
Shrey Shalin

GETTY IMAGES

THE GIST

- On May 20, a three-judge Bench headed by the Chief Justice of India (CJI) B.R. Gavai, which also included Justices A.G. Masih and K.V. Chandran, has made practical experience of three years a pre-requisite to appear for the subordinate judicial services exam.
- The Justice Shetty Commission, set up in 1996, found that while almost all States had complied with the three-year rule, some States had gone beyond and prescribed more than three years as minimum qualification.
- The solution is to catch young talent and enhance the training period to two years or more and use the best of academic and practical skills to enhance efficiency of the lower rung of the judiciary.

There has been growing anxiety for months around the anticipation of a verdict from the Supreme Court (SC) that would bring back a rule wherein an advocate would need three years of practice in order to become eligible to write the judicial services examinations.

And now, on May 20, a three-judge Bench headed by the Chief Justice of India (CJI) B.R. Gavai, which also included Justices A.G. Masih and K.V. Chandran, has made practical experience of three years a pre-requisite to appear for the subordinate judicial services exam. The judgment has substantiated the hypothesis that the SC has been consistently inconsistent on this issue. No empirical evidence was presented to the court about the 'lower quality' of fresh graduates (para 57), and neither was the number of fresh graduates who qualified for judicial services within a year of their graduation given in the judgment. The court simply went back to the three-year rule because majority of the High Courts advocated for it.

History of the rule

This matter has taken multiple twists since it was addressed in the 14th Law Commission of India (LCI) report in 1958, chaired by M.C. Setalvad. The Commission contended that persons with experience ranging from three to five years shall be eligible to compete in the examinations for lower subordinate judge in every State. This exam was to have questions of practical aspect and would not depend upon rote memorisation alone. Ability to draft pleadings, appreciate evidence and write judgments were also to be tested. Unfortunately, current question papers of most judicial services exams continue to test rote memory only.

For higher judiciary, an All India Judicial Services (AIJS), a centralised recruitment system for judges, was proposed. The Commission report was of the opinion that it was necessary to tap brilliant university graduates at the right time to judicial services. Therefore, the AIJS required no practical experience. Anyone holding a law degree, ranging from 21-25 years of age would be eligible, and practical experience was to be developed through a 'carefully devised scheme of training' which includes practical working in the courts. The exam was to be conducted at the National level. That is, the report contended for two different sets of eligibility criteria for recruitment at the State-level (lower subordinate judge exams) and at the national level (AIJS).

In the *All India Judges' Association versus Union of India, 1992*, the question of 'uniformity' in service conditions of judges across India was taken up. The judgment endorsed the LCI Report and its provisions on AIJS including the recommendation to allow fresh law graduates to compete in the exam. The top court issued directions to the Union of India to set up the AIJS. However, a review petition of the *Judges' Association* case, filed in 1993, held that a minimum legal practice of three years was essential to qualify for the subordinate judicial services examination.

The court in *All India Judges' Assn. (II) versus Union of India*, (1993) held "in most of the States, the minimum qualifications for being eligible to the post of the Civil Judge-cum-Magistrate First Class/Magistrate First Class/Munsiff Magistrate is minimum three years' practice as a lawyer in addition to the degree in law. In some States, however, the requirement of practice is altogether dispensed with and judicial officers are recruited with only a degree in law to their credit. The recruitment of raw graduates as judicial officers without any training or background of lawyering has not proved to be a successful experiment. Considering the fact that from the first day of his assuming office, the Judge has to decide, among others, questions of life, liberty, property and reputation of the litigants, to induct graduates fresh from the Universities to occupy seats of such vital powers is neither prudent nor desirable."

The court went on to observe, "the experience as a lawyer is, therefore, essential to enable the Judge to discharge his duties and functions efficiently ..."

The court thus gave a strong order, "We, therefore, direct that all States shall take immediate steps to prescribe three years' practice as a lawyer as one of the essential qualifications for recruitment as the judicial officer at the lowest rung."

Attracting talent

The Justice Shetty Commission, set up in 1996, found that while almost all States had complied with the three-year rule, some States had gone beyond and prescribed more than three years as minimum qualification. The report also stated that advocates with 4-7 years of experience were getting selected only at the age of 27 to 30. Therefore, in the *All India Judges' Association versus Union of India* (2002), the Supreme Court accepted the recommendation of the Shetty Commission that the three-year-rule had failed to attract the best talent to judicial services, and scrapped the rule. The court was candid in admitting that, "with the passage of time, experience has shown that the best talent which is available is not attracted to the Judicial Service. A bright young law graduate after 3 years of practice finds the Judicial Service not attractive enough. It has been recommended by the Shetty Commission after taking into consideration the views expressed before it by various authorities, that the need for an applicant to have been an Advocate for at least 3 years should be done away with..."

Now, the Supreme Court has again gone back to the three year rule, as the crucial question of how to balance attracting the best talent along with the necessary skills is still valid.

For that one must understand ground realities. No one can deny that the best law students today are in National Law Universities. Most of these students get lucrative corporate placements with huge pay packages. Many of them also need to repay education loans as almost all law universities' five-year fee ranges between ₹12-₹15 lakh. Reputed private law schools charge even more, between ₹20-₹40 lakh.

The SC yet again hopes that three years' of practice may help future judges in addressing courtroom decorum, complex procedural cases and in understanding the perspectives of all stakeholders of the judicial system. Young candidates are said to lack maturity, empathy and patience. The reality is, however, that most candidates wishing to practice don't see judicial services as a career option, while those who wish to enter judicial services rarely see practice as a career option. Most States find it difficult to fill vacancies of the higher judicial services due to the poor performance of candidates in the written examinations. Recently, Rajasthan notified that not a single candidate was found suitable.

The fact of the matter is that the mandatory three-years of practice rule will significantly discourage brighter minds from joining the judicial services. Economically backward and SC/ST/OBC candidates would be the worst hit, as they cannot afford to wait. It becomes necessary for them to start earning. These candidates would be keen to write examinations to enter civil services, public sector undertakings (PSUs), or even join academia.

Various challenges

The Bar Council of India has encouraged senior advocates and firms to pay a minimum of ₹15,000 in rural areas and ₹20,000 in urban centres to junior lawyers. This bare minimum stipend is not enough for a law student having no connections in the field. Non-matriculants in Delhi are paid ₹20,371 a month for clerical work or supervisory work in scheduled employment. An unskilled worker is paid ₹18, 456 a month as per the minimum Wages Act. Only financially sound candidates would have the luxury to appear for judicial services if the three year condition is brought back.

Additionally, as per the India Justice Report, women account for 38% of the judges in district judiciary. Nine out of the top 10 candidates from the recently held Bihar judicial services exam were female candidates. Now, if the three-year rule is implemented, a number of these women, going through career breaks or maternity leaves, will suffer a setback.

Another problem is with regard to age. To appear for the civil services examinations, the minimum eligibility criteria is to be a final year student of a three-year degree programme. But for the judicial services examination, five-six years of education together with three years of experience would make them highly financially vulnerable as well as older compared to their counterparts in the civil services. This classification would neither be based on intelligible differentia nor achieve the rational object of attracting the best minds. Moreover, unlike the civil services, the judicial services exam in most States is not held at regular intervals. Even if a candidate has fulfilled the three year criteria, he/she has to wait for another few years for the exam to be advertised.

What can be done?

The solution is to catch young talent and enhance the training period to two years or more and use the best of academic and practical skills to enhance efficiency of the lower rung of the judiciary. Trainee officers may be required to serve as probationers to serving District and Sessions Judge or Justices of the High Court to enhance their understanding of the courtroom. For six months, they may be attached to senior lawyers as well.

We must also reform the examination and come up with innovative questions. The examination should be based on scenario-based questions, and judgment writing should carry more weightage. Excluding fresh talent may do more harm than good to our judicial system.

Faizan Mustafa is Vice-Chancellor, Chanakya National Law University, Patna. Shrey Shalin is an is LL.M. candidate at National Law University, Delhi. Views expressed are personal.

नियम की पृष्ठभूमि:

- 1958 (14वीं विधि आयोग रिपोर्ट): निचली न्यायपालिका के लिए 3-5 साल की प्रैक्टिस की वकालत की गई, लेकिन AIJS उम्मीदवारों (अखिल भारतीय न्यायिक सेवा) को छूट दी गई।
- 1992 और 1993 (अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ मामले): सुप्रीम कोर्ट ने तीन साल के नियम का समर्थन किया, इस बात पर जोर दिया कि अनुभवहीन कानून स्नातकों में परिपक्वता और अदालती समझ की कमी होती है।
- 2002 (शेट्टी आयोग की सिफारिशों को सुप्रीम कोर्ट ने स्वीकार किया): सुप्रीम कोर्ट ने इस नियम को यह कहते हुए रद्द कर दिया कि यह न्यायपालिका में शामिल होने से सर्वश्रेष्ठ प्रतिभाओं को हतोत्साहित करता है।
- 2025: सुप्रीम कोर्ट ने बहुमत वाले उच्च न्यायालयों से समर्थन का हवाला देते हुए नियम को बहाल किया और उम्मीद जताई कि अभ्यास से सहानुभूति, प्रक्रियात्मक समझ और परिपक्वता में सुधार होगा।

3-वर्षीय नियम के पक्ष में तर्क:

- न्यायाधीशों को जीवन, स्वतंत्रता, संपत्ति से जुड़े फैसले सौंपे जाते हैं और उनके पास व्यावहारिक अनुभव होना चाहिए।
- अधिवक्ताओं को अभ्यास के शुरुआती वर्षों के दौरान न्यायालय की मर्यादा, प्रक्रियागत जटिलताओं से परिचित होना और हितधारकों के दृष्टिकोण से परिचित होना होता है।
- इसका उद्देश्य "अप्रशिक्षित स्नातकों" को पर्याप्त आधार के बिना संवेदनशील मामलों पर निर्णय लेने से रोकना है।

चिंताएँ और आलोचनाएँ:

1. साक्ष्य का अभाव:

o नए स्नातकों के कारण प्रदर्शन में गिरावट पर कोई अनुभवजन्य डेटा प्रस्तुत नहीं किया गया।
o अभ्यास की कमी के कारण उम्मीदवारों की विफलता पर कोई सर्वेक्षण या आँकड़े नहीं।

2. प्रतिभा का ह्रास:

o राष्ट्रीय विधि विश्वविद्यालयों (NLU) से स्नातक आकर्षक वेतन और उच्च शिक्षा ऋण (₹12-₹40 लाख) के कारण कॉर्पोरेट प्लेसमेंट का विकल्प चुनते हैं।
o विलम्बित प्रवेश और वित्तीय बाधाओं के कारण प्रतिभाशाली लोग न्यायिक सेवाओं को छोड़ सकते हैं।

3. सामाजिक-आर्थिक प्रभाव:

o एससी/एसटी/ओबीसी और आर्थिक रूप से कमज़ोर उम्मीदवार असंगत रूप से प्रभावित हो सकते हैं।
o तीन साल की देरी उन लोगों को प्रभावित करती है जो स्नातक स्तर की पढ़ाई के बाद तत्काल आय चाहते हैं।

4. लैंगिक असमानता:

o निचली न्यायपालिका में 38% महिलाएँ हैं, जिन्हें विवाह या मातृत्व के कारण अपने करियर में रुकावटों का सामना करना पड़ सकता है।
o देरी करने से उनकी भागीदारी कम हो सकती है।

5. आयु और भर्ती के मुद्दे:

o न्यायिक सेवा के इच्छुक लोग सिविल सेवा के उम्मीदवारों से अधिक उम्र के हो जाते हैं।
o कई राज्यों में न्यायिक परीक्षाएँ नियमित रूप से आयोजित नहीं की जाती हैं, जिससे अनिश्चितता बढ़ती है।

6. न्यूनतम वेतन विरोधाभास:

o जूनियर वकील अक्सर अकुशल श्रमिकों (₹15,000-₹20,000/माह) से कम कमाते हैं, जिससे यह पेशा नए लोगों के लिए अनाकर्षक हो जाता है।

आगे की राह: • न्यायिक प्रशिक्षण में सुधार:

- o बहिष्कार के बजाय, भर्ती के बाद के प्रशिक्षण (1-2 वर्ष) में सुधार करें।
- o परिवीक्षार्थियों को उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, वरिष्ठ वकीलों और ट्रायल कोर्ट से जोड़ें।

• परीक्षा पैटर्न में सुधार:

- o रटने की आदत से दूर हटें।
- o परिदृश्य-आधारित प्रश्न, निर्णय लेखन और न्यायालय अनुकरण शामिल करें।

• दोहरी ट्रैक पात्रता बनाएँ:

- o नए स्नातकों और अनुभवी अधिवक्ताओं दोनों को विभेदित प्रशिक्षण मॉड्यूल के साथ उपस्थित होने की अनुमति दें।

• संस्थागत समर्थन:

- o वजीफा-आधारित इंटर्नशिप या सेवा-पूर्व भूमिकाएँ शुरू करें।
- o अभ्यास के लिए कानूनी सहायता भागीदारी को प्रोत्साहित करें।

निष्कर्ष:

- जबकि सर्वोच्च न्यायालय का इरादा न्यायपालिका में क्षमता और परिपक्वता सुनिश्चित करना है, तीन साल के अनिवार्य अभ्यास नियम से मेधावी और वंचित उम्मीदवारों, विशेष रूप से महिलाओं और कम समृद्ध पृष्ठभूमि के छात्रों को बाहर करने का जोखिम है। न्यायिक सुधार साक्ष्य, समावेशिता और कानूनी शिक्षा और करियर की बदलती गतिशीलता पर आधारित होना चाहिए। एक समग्र दृष्टिकोण जो कठोर प्रशिक्षण, परीक्षा सुधार और प्रणालीगत समर्थन को जोड़ता है, बेंच पर सर्वश्रेष्ठ कानूनी दिमागों को आकर्षित करने में अधिक न्यायसंगत और प्रभावी होगा।

UPSC Mains Practice Question

प्रश्न: न्यायिक सेवाओं के लिए तीन वर्षीय कानूनी अभ्यास नियम की बहाली से प्रक्रियागत परिपक्वता सुनिश्चित हो सकती है, लेकिन इससे मेधावी उम्मीदवारों के वंचित होने का जोखिम है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के आलोक में आलोचनात्मक रूप से परीक्षण करें। (250 words)

Page : 08 Editorial Analysis

Scheme-based workers, the struggle for an identity

The central government employs millions of regular and contract workers who are recognised as government employees and are in the pay spectrum of the government. The government also employs several types of workers such as Anganwadi workers or AWWs (13,51,104 workers) and Anganwadi helpers or AWHs (9,22,522), Accredited Social Health Activists or ASHAs (10,52,322 workers), and Mid-Day-Meals workers or MDMWs (25,16,688) under The Integrated Child Development Services (ICDS) Scheme since 1975, the National Rural Health Mission (NHRM) and the mid-day meals day scheme. Put together, around 60 million workers work in government schemes.

These schemes are those which carry out social and economic functions by taking care of children and lactating mothers and nutrition aspects. They are also a bridge between the community and the public health system, improving school enrolment and the nutritional health system.

The reality of their existence

Though there has been much recognition of their work (by the Prime Minister and even the World Health Organization), these workers face hardship – they have been denied basic labour market rights such as workers' status, minimum wages and social security. Three basic issues among others have affected scheme-based workers (SBW) – an identity as "workers" just like any government employee, minimum wages and social security. They have adopted three strategies to highlight their plight – strikes, legal action and social dialogue.

Major central trade unions (AITUC, BMS, CITU) have organised the SBWs extensively. Since there are no prescribed wage negotiation timelines, trade unions have gone on frequent strikes over the issue of wage revision at random. State governments are more generous depending more on the strength of unions, their proximity with the party in power, and political factors such as elections. In March 2025, Anganwadis in Kerala called off their 13-day indefinite strike. The frequent and large-sized struggles of and by SBWs is a feat of labour mobilisation in modern times as State governments have not always been kind to striking workers. In fact, the Maharashtra government imposed the Maharashtra Essential Services Maintenance Act in 2017 to curb the right of Anganwadis in the State to go on strike. In a sense, the government has recognised the "essential" nature of work done by Anganwadis.

K.R. Shyam Sundar

is Professor of Practice, Management Development Institute (MDI) Gurgaon

The demand of SBWs, of a labour market identity', is a legitimate one

The judiciary's approach

At the same time, Anganwadis have been knocking on the doors of the judiciary, with some success after initial setbacks. In *State Of Karnataka & Ors vs Ameerbi & Ors* (2006), the Supreme Court held that as Anganwadis do not carry out any function of the state, and do not hold a post under a statute, it did not consider them as workers. This was a judgment that was a blow against the struggles of these workers. But there was judicial relief.

The Court, in 2022, granted that Anganwadis are eligible for gratuity as they are covered under workers/employees under the Payment of Gratuity Act, 1972 (*Maniben Maganbhai Bhariya vs District Development Officer*, 2022). In 2024, the Gujarat High Court (*Adarsh Gujarat Anganwadi Union & Ors. vs State of Gujarat*) observed that Anganwadis perform onerous duties and responsibilities apart from performing important services under the Right to Education Act (RTE) and the National Food Security Act (NSF). It directed the central and State governments to jointly frame a policy under which the AWWs and AWHs could be regularised as Class III and Class IV grade State employees. Until then, they would be paid minimum wages (Class III and Class IV, respectively).

The central trade unions have been raising the issues concerning the SBWs at the tripartite forum, the Indian Labour Conference (ILC), which is a social dialogue forum created during colonial rule. It is notable that in the 45th ILC, its tripartite Conference Committee made unanimous recommendations to the central government to treat the SBWs as "workers" and not as volunteers or honorary workers, and pay them minimum wages, pension, health insurance and provident fund, among others.

The usual stand

The government is concerned with the huge cost implications as the employment of SBWs as government employees is set to grow as the population grows. On the other hand, the Labour Minister, in 2016, said in the Rajya Sabha, that the recommendations require long-time policy formulation and that there can be no fixed time-line for their implementation. Policy delay and avoidance at best – and outright denial policy at worst – has been the clever policy of the central government, irrespective of the party in power. The government has been dodging these important issues. On the other hand, there are attempts to privatise the Integrated Child Development Services Scheme (ICDS). SBW organisations have been waging relentless struggles at all levels to oppose the privatisation of the ICDS and strengthen the labour rights of SBWs. Their struggle, which involves multiple issues, will go on.

It is not "applause" that they seek but "worker" status. It is an existential struggle. It is interesting to note that in both the traditional and modern (gig) sectors, workers are battling for their labour market "identities" as "workers" and earn "wages and not "honorarium". It is not charity that they seek but a legitimate demand for "workers" status by dint of hard work over long hours.

Paper 02 : सामाजिक न्याय

UPSC Mains Practice Question : योजना-आधारित श्रमिक (एसबीडब्ल्यू) भारत के कल्याण कार्यक्रमों की रीढ़ हैं, फिर भी उन्हें बुनियादी श्रम अधिकारों से वंचित रखा जाता है।" इस कथन के प्रकाश में, एसबीडब्ल्यू के सामने आने वाली चुनौतियों की आलोचनात्मक जांच करें और उनके अधिकारों को सुरक्षित करने में न्यायपालिका, ट्रेड यूनियनों और नीति सुधारों की भूमिका पर चर्चा करें। (250 words)

संदर्भ:

- भारत की कल्याणकारी वितरण प्रणाली आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं (AWW), सहायकों (AWH), आशा और मध्याह्न भोजन कार्यकर्ताओं (MDMW) जैसे लाखों योजना-आधारित श्रमिकों (SBW) पर निर्भर करती है। सार्वजनिक स्वास्थ्य, पोषण और शिक्षा में उनके महत्वपूर्ण योगदान के बावजूद, इन श्रमिकों को औपचारिक कर्मचारियों के रूप में मान्यता नहीं दी जाती है, और उन्हें न्यूनतम मजदूरी, सामाजिक सुरक्षा और औपचारिक कार्यकर्ता की स्थिति जैसे बुनियादी श्रम अधिकारों से वंचित किया जाता है।

पैमाना और महत्व:

- लगभग 60 मिलियन श्रमिक ICDS, NHM और MDMS जैसी सरकार द्वारा संचालित सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं में लगे हुए हैं।
- **उनकी जिम्मेदारियों में शामिल हैं:**
  - o बच्चों और माताओं के लिए पोषण संबंधी देखभाल।
  - o समुदायों को स्वास्थ्य सेवाओं से जोड़ना।
  - o मध्याह्न भोजन के माध्यम से स्कूल में नामांकन और प्रतिधारण को बढ़ावा देना।
- ये कार्यकर्ता भारत के सामाजिक बुनियादी ढांचे के लिए आवश्यक हैं, फिर भी गहरी जड़ें वाले संरचनात्मक अन्याय का सामना करते हैं।

मुख्य मुद्दे:

1. 'श्रमिकों' के रूप में मान्यता का अभाव:

o आधिकारिक तौर पर स्वयंसेवक या मानद कार्यकर्ता कहलाते हैं, रोजगार लाभ के हकदार नहीं हैं।
o उनकी कानूनी पहचान अपरिभाषित रहती है, जिससे उचित पारिश्रमिक और नौकरी की सुरक्षा तक पहुँच प्रभावित होती है।

2. कोई न्यूनतम मज़दूरी या सामाजिक सुरक्षा नहीं:

o भविष्य निधि, स्वास्थ्य बीमा या पेंशन के लिए अयोग्य।
o मानदेय का भुगतान, जो मनमाना है और अक्सर देरी से मिलता है।

3. न्यायिक रुख:

o 2006 (अमीरबी मामला): सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें सरकारी कर्मचारी का दर्जा देने से इनकार कर दिया।
o 2022 (मणिबेन मामला): सुप्रीम कोर्ट ने ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम के तहत आंगनवाड़ी को ग्रेच्युटी प्रदान की।
o 2024 (गुजरात हाईकोर्ट): आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं और आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं को तृतीय और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के रूप में नियमित करने के लिए न्यूनतम मज़दूरी भुगतान और नीति निर्माण का निर्देश दिया।

4. नीति निष्क्रियता:

o 45वें भारतीय श्रम सम्मेलन द्वारा श्रमिक का दर्जा और लाभ की सिफारिश करने के बावजूद, कार्यान्वयन लंबित है।
o सरकारें सुधार में बाधा के रूप में लागत निहितार्थ का हवाला देती हैं।

5. निजीकरण का खतरा:

o आईसीडीएस और अन्य योजनाओं को निजीकरण के दबाव का सामना करना पड़ रहा है, जिससे नौकरी की असुरक्षा और बढ़ गई है।
o एसबीडब्ल्यू यूनियनें इस बदलाव का सक्रिय रूप से विरोध कर रही हैं।

व्यापक निहितार्थ:

- भारत के सार्वजनिक क्षेत्र में अनौपचारिकता के व्यापक संकट को दर्शाता है।
- गिग वर्कर्स की पहचान के संघर्ष को दर्शाता है, दोनों ही "श्रमिकों" के रूप में कानूनी मान्यता की मांग कर रहे हैं।
- आवश्यक सेवा की स्थिति और शोषणकारी रोजगार स्थितियों के बीच विरोधाभास को उजागर करता है।

सिफारिशें:

1. विधायी सुधार:

o योजना-आधारित श्रमिकों को औपचारिक कर्मचारियों के रूप में स्पष्ट रूप से परिभाषित करने के लिए कानूनों में संशोधन करें।
o ईपीएफ अधिनियम, ईएसआई अधिनियम और न्यूनतम मजदूरी अधिनियम जैसे श्रम कल्याण कानूनों में समावेश सुनिश्चित करें।

2. राष्ट्रीय नीति ढांचा:

o केंद्र और राज्यों द्वारा संयुक्त रूप से तैयार किया गया।
o रोजगार की एक समान शर्तें, समय पर भुगतान और शिकायत निवारण तंत्र।

3. सामाजिक संवाद में सुधार:

o सार्थक बातचीत के लिए भारतीय श्रम सम्मेलन जैसे मंचों को पुनर्जीवित करें।
o त्रिपक्षीय श्रम निकायों में एसबीडब्ल्यू प्रतिनिधियों को शामिल करें।

4. क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण:

- o कौशल विकास को बढ़ावा दें और कौशल उन्नयन के लिए प्रोत्साहन प्रदान करें।
- o पदोन्नति और पुनर्वर्गीकरण के माध्यम से लंबे समय से सेवारत श्रमिकों को मान्यता दें।

निष्कर्ष:

- योजना-आधारित श्रमिक भारत की कल्याणकारी वितरण प्रणाली की रीढ़ हैं, फिर भी वे श्रम अर्थव्यवस्था के हाशिये पर हैं। उनका संघर्ष परोपकार के लिए नहीं बल्कि कानूनी पहचान, सम्मान और न्याय के लिए है। समानता, सामाजिक न्याय और सम्मानजनक काम के संवैधानिक सिद्धांतों को बनाए रखने के लिए औपचारिक मान्यता, उचित वेतन और सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने वाली एक नई श्रम नीति आवश्यक है।